जम्मू कश्मीर राज्य

बनाम

लखविन्दर कुमार व अन्य

(क्रिमिनल अपील संख्या 624/2013 आदि)

25 अप्रैल 2013

(चन्द्रमोली केआर. प्रसाद और फकीर मोहम्मद इब्राहिम कालिफुल्ला जेजे.)

नियम 41(1)(i) व (ii) सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 सपठित धारा 47 और 80 सुरक्षा बल अधिनियम -बीएसएफ कर्मी और कुछ लड़कों के बीच झगडे के कारण श्रीनगर में बीएसएफ सिपाही की गोली लगने से एक लडके की मौत -पुलिस द्वारा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया - उप महानिरीक्षक द्वारा आरोपियों के खिलाफ सुरक्षा बल न्यायालय में मुकदमा चलाने की प्रार्थना करने वाले प्रार्थना पत्र को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मंजूर किया - उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आदेश की पुष्टि की गई -अभिनिर्धारित किया य अधिसूचना के मद्देनजर, अपराध घटित होते समय आरोपी सक्रिय कर्त्तव्य पर थे इसलिए अधिनियम की धारा 47 के तहत बार सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा सुनवाई के रास्ते में बाधा नही है - यद्यपि, इस प्रकरण में, आपराधिक न्यायालय

और सुरक्षा बल न्यायालय प्रत्येक के पास अपराध की सुनवाई के लिए क्षेत्राधिकार होगा। प्रकरण के आरोप यह संकेत नही देते है कि अभियुक्तों ने नियम 41(1)(प) में उल्लेखित किसी स्थिति में अपने कर्तव्य के पालन के दौरान अपराध किया हो - यद्यपि कमांडिंग ऑफिसर ने अधिनियम की धारा 80 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग किया है। लेकिन उन्होंने कही भी यह नही कहा है कि सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा अभियुक्त का विचारण नियम 41(1)(पप) के तहत बल के अनुशासन के हित में आवश्यक है - कमांडिंग ऑफिसर ने नियमों के तहत उसके उपर लगाए गए प्रतिबंध से अनभिज्ञ होकर अपनी शक्ति का प्रयोग किया है - इसलिए उनका आदेश अवैध है - उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट सीजेएम का आदेश अपास्त किया जाता है।

जे और के राज्य बनाम लखविंदर कुमार व अन्य 1071

यद्यपि, महानिदेशक को सीजेएम के समक्ष उचित आवेदन करने की स्वतंत्रता दी गई है - धारा 47, 80 और 141 सीमा सुरक्षा बल अधिनियम प्रत्यायोजित विधान -अभिनिर्धारित किया कि सीमा सुरक्षा बल नियम 1969 का नियम 41, सीमा सुरक्षा बल अधिनियम 1969 की धारा 80 के प्रावधानों के साथ टकराव में नही है।

प्रत्यायोजित विधान -शक्ति के प्रयोग का विस्तार -अभिनिर्धारित किया - जब शक्ति सामान्य रूप से प्रदान की जाती है और उसके बाद

प्रगणित मामलों के संबंध में, जैसे हस्तगत प्रकरण में निर्दिष्ट विषय के संबंध में विनिर्देशन को केवल उदाहरणात्मक माना जाता है और यह सामान्य शक्ति का दायरा सीमित नही करता है।

एक एफ.आई.आर. सीमा सुरक्षा बल के एक कांस्टेबल और एक कमांडेंट, अर्थात क्रिमिनल अपील संख्या 624/2013 के उत्तरदाता संख्या 1 और 2 के खिलाफ इस आरोप पर दर्ज करवायी गयी थी कि जब वे कंपोजिट अस्पताल में वार्षिक चिकित्सा जांच के बाद लौट रहे थे तो रास्ते में कुछ लड़कों के साथ झगडे में शामिल हो गए और उत्तरदाता संख्या 2 के उकसावे पर उत्तरदाता संख्या 01 ने दो बार फायर किये और एक गोली उनमें से एक लडके को लग गयी जिससे उसकी मृत्यु हो गई। पुलिस ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष रणबीर दंड संहिता की धारा 302, 109 और 201 के तहत दंडनीय अपराधों में दोनों प्रत्यर्थियों के खिलाफ आरोप पत्र प्रस्तुत किया। सीमा सुरक्षा बल के उप महानिरीक्षक ने कार्यवाही पर रोक लगाने से और आरोपी व्यक्तियों को विचारण हेतु सुरक्षा बल न्यायालय में भेजने के लिये मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष एक आवेदन पेश किया। आवेदन मंजूर किया गया। इस आदेश को मृतक के पिता और राज्य सरकार ने उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण याचिकाओं में असफल रूप से चुनौती दी थी। हस्तगत अपीलों में यह तर्क दिया गया कि घटित अपराध फौजदारी न्यायालय द्वारा

विचारणीय एक सिविल अपराध था क्योंकि अपराध के समय, आरोपी व्यक्ति किसी भी ऑपरेशन में शामिल नहीं थे और न ही वे सक्रिय कर्त्तव्य पर थे जो कि सुरक्षा बल न्यायालय के समक्ष उन्हे विचारित करने के क्षेत्राधिकार के लिये बाध्य करें।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया

1.1. बल के सदस्यों के रूप में अभियुक्त व्यक्तियों की ड्यूटी और प्रश्नगत अपराध के मध्य कोई संबंध नही है यहां तक की दूरस्थ संबंध भी नही है। अपराध की स्थिति न तो बल के नियंत्रण में थी तथा ना ही अपराध पीडित व्यक्ति बल से किसी प्रकार से जुडा हुआ था। लेकिन अधिसूचना के लिए ये उत्तर देने के लिये पर्याप्त हो सकता है कि अभियुक्त व्यक्ति अपराध के करने के समय सक्रिय कर्त्तव्य पर नही थे। यद्यपि सीमा सुरक्षा बल अधिनियम, 1969 की धारा 2(1)(ए) के संबंध में केन्द्र सरकार द्वारा जारी की गयी अधिसूचना में यह कहा गया है कि "जम्मू और कश्मीर राज्य में सेवा देने वाले" बल के "प्रत्येक सदस्य की ड्यूटी" "1 जुलाई 2007 से 30 जून 2010 के मध्य सक्रिय कर्त्तव्य होगी।" अधिसूचना कर्त्तव्य की प्रकृति के बारे में कोई संदर्भ नही देती है बल्कि "सक्रिय कर्त्तव्य" की परिभाषा में आने के लिये इसमें उस स्थान पर जोर दिया गया है जहां पर बल के सदस्य सेवाएं दे रहे है इसलिए

आरोपी अपराध के घटित होने के समय सक्रिय कर्त्तव्य पर थे और इसलिये उनका विचारण सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा किये जाने में अधिनियम की धारा 47 का कोई बार, बाधा नही है। [पैरा 9,10 और 12] [1080-जी-एच, 1081-ई-जी, 1082-इ]

1.2 हालांकि सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण की रोक को हटा दिया गया है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि आरोपी जिसने अधिनियम की धारा 47 में दर्शायी गई प्रकृति का अपराध किया है वह आवश्यक रूप से सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा ही विचारित किया जावे। हस्तगत मामले में सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण में कोई रोक नहीं है। किंतु फिर भी अभियुक्त का विचारण आपराधिक न्यायालय द्वारा भी किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय के बीच विचारण का विकल्प है। n जे और के राज्य बनाम लखविंदर कुमार व अन्य 1073

इस स्थिति को अधिनियम की धारा 80 के तहत दर्शाया गया है। [पैरा 12][1082-ई-जी]

1.3 इस मामले में, आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय प्रत्येक के पास उस अपराध के विचारण का क्षेत्राधिकार होगा जिसे अभियुक्तों द्वारा कारित करने का आरोप लगाया गया है। ऐसी आकस्मिकता की स्थिति में अधिनियम की धारा 80 ने उस बल के

महानिदेशक या महानिरीक्षक या उप महानिरीक्षक को विवेकाधिकार प्रदान किया है जिसकी कमान में आरोपी व्यक्ति कार्यरत है, कि वह यह तय कर सके कि कार्यवाही किस अदालत के समक्ष संस्थित की जाएगी। अधिनियम की धारा 80 के तहत विवेकाधिकार के प्रयोग के लिए नियम बनाये गये है।[पैरा 13][1083-बी-डी और ई-एफ]

2.1 सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 का नियम 41(1)(i) उपबंधित करता है कि जहां अपराध बल के सदस्य के रूप में कर्तव्य के निर्वहन के दौरान या सरकार या बल या अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति की संपत्ति के संबंध में या अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति के विरूद्ध अपराध किया जाता था, अधिनियम की धारा 80 के तहत शक्ति का प्रयोग करने वाला सक्षम अधिकारी यह निर्देश दे सकता है कि बल के सदस्य जिनके द्वारा अपराध किया गया है वे सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारित किये जांएगे। इस मामले का आरोप यह नही दर्शाते कि आरोपी ने नियम 41(i) में वर्णित किसी भी स्थिति में अपराध किया है। इसलिए अभियुक्त व्यक्तियों का सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण संबंधी आवश्यक क्षेत्राधिकार का तथ्य अस्तित्व में नही है। [पैरा 14][1084-जी-एच, 1085-ए-बी]

2.2 नियम 41(1)(ii) अधिनियम की धारा 80 के तहत शक्तियों का प्रयोग करने वाले सक्षम अधिकारी को यह निर्णय करने के लिये अधिकृत

करता है कि सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण का दावा अनुशासन के हित में आवश्यक होगा अथवा नही। मौजूदा मामले में कमांडिग ऑफिसर ने धारा 80 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग किया तथा यह कहने के अलावा

उक्त शक्तियों का प्रयोग उसके विवेकाधिकार में है, उसने कही भी यह नही कहा है कि सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा अभियुक्त का विचारण बल के अनुशासन के हित में आवश्यक है। अधिनियम के उपबंधों को प्रभाव प्रदान करने के लिये एक बार वैधानिक दिशानिर्देश जारी कर दिये गये है। उन दिशानिर्देशों का पालन किये बिना विवेकाधिकार का प्रयोग निर्णय को असुरक्षा प्रदान करेगा। कमांडिंग ऑफिसर ने उस पर नियमों के तहत लगाये गये प्रतिबंधों की उपेक्षा करते हुए शक्तियों का प्रयोग किया इसलिये उसका निर्णय अवैध है और इस आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश को भी पुष्ट किये जाने की अनुज्ञा नही दी जा सकती [पैरा 14 और 22][1085-सी, 1092-बी-डी]

3.1 विधायिका द्वारा नियम बनाने की शक्ति प्रदान करने के लिये अपनाये गये सबसे सामान्य तरीकों में से एक है पहले सामान्य शब्दों में प्रावधान करना अर्थात अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी बनाना और फिर विशेष रूप से यह कहना और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल

प्रभाव डाले बिना प्रगणित मामलों को नियम प्रदान कर सकते है। अधिनियम की धारा 141, जो केन्द्र सरकार को इस प्रकृति के नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। [पैरा16][1085-जी-एच, 1086-ए]

3.2 जब शक्ति सामान्य रूप से और उसके बाद प्रगणित मामलों के संबंध में प्रदान की जाती है जैसा कि वर्तमान मामले में निर्दिष्ट कें संबंध में विशिष्टीकरण को केवल उदाहरण के रूप में माना जाता है और यह सामान्य शक्ति के दायरे को सीमित नही करता है। [पैरा 17][1088-सी]

रोहतक और हिसार जिला विद्युत आपूर्ति कम्पनी लिमिटेड बनाम यू.पी. सरकार, **1966 एससीआर 863 = एआईआर 1966 एससी 1471 और** अफजल उल्लाह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य **1964 एससीआर 991 = एआईआर 1964 एससी 264 पर भरोसा किया**

सम्राट बनाम सिबनाथ बनर्जी, **एआईआर 1945 पीसी 156 निर्देश दिया गया।**

जे और के राज्य बनाम लखविंदर कुमार व अन्य 1075

3.3 अधिनियम की धारा 80 के तहत आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय के बीच चयन करने के लिये निर्दिष्ट अधिकारी को व्यापक विवेकाधिकार दिया गया है लेकिन नियम 41 के प्रावधान को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से अधिनियम ने उस विवेकाधिकार का प्रयोग

करने के लिये दिशानिर्देश निर्धारित किए है। नियम 41 अधिनियम में अन्तर्दिष्ट प्रावधान से परे नहीं गया है न ही यह किसी भी तरह से अधिनियम के विरोध में है इसलिए इसे ऐसे ही माना जाना चाहिए जैसे कि अधिनियम में निहित है। कमांडिंग ऑफिसर विवेक के प्रयोग के लिये निर्धारित दिशा-निर्देशों को अपने ध्यान में रखें। [पैरा 20][1090-एफ-एच]

4. वर्तमान मामले में आरोप पत्र पेश होने के तुरंत बाद और विचारण शुरू होने से पहले बल ने अभियुक्तों के विचारण का विकल्प प्रयोग किया है मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, बल के महानिदेशक को स्वतंत्रता प्रदान दी जाती है, यदि ऐसी सलाह दी जाती है कि निर्णय में किये गये अवलोकन को ध्यान में रखते हुये कानून के अनुसार पूरे मुद्दे पर दोबारा गौर करें और यदि वह इस निष्कर्ष पर पंहुचता है कि मुकदमा सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा संचालित किया जाना चाहिए। तो उसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष नये सिरे से उचित आवेदन करने से कोई रोक नही है।[पैरा 24 और 25][1094-ए-सी]

जोगिन्दर सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, 1971 (2) एससीआर 851 = (1971) 3 एससीसी 86 भेद किया

केस कानून संदर्भ:

1966 एससीआर 863 पर भरोसा पैरा 17

एआईआर 1945 पीसी 156 निर्दिष्ट पैरा 17

1964 एससीआर 991 पर भरोसा पैरा 19

1971 (2) एससीआर 851 भेद किया पैरा 23

जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय, श्रीनगर के सी आर एल आर नम्बर 30/2010, में दिनांक 21/10/2011 के निर्णय और आदेश से साथ ही

आपराधिक अपील संख्या; आपराधिक अपील संख्या 625/2013

उत्तरदाताओं की ओर से गौरव पचनंदा, सुनील फर्नांडिस, रेणु गुप्ता, राहुल शर्मा, वर्णिका तोमर, कामिनी जायसवाल, वृंदा ग्रोवर, अभिमन्यु श्रेष्ठ।

प्रतिवादियों की ओर से आर. एफ. नरीमन, एस जी, सिद्धार्थ दवे, रितिन राय, बी. कृष्णा प्रसाद, सुनील फर्नांडीज।

न्यायाधिपति चन्द्रमोली के आर प्रसाद द्वारा न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

1. मामले में आरोप बहुत परेशान करने वाला है। श्रीनगर के बुलेवार्ड रोड पर सीमा सुरक्षा बल (इसके बाद इसे" ") के एक कांस्टेबल लखविंदर कुमार की गोली से एक कश्मीरी किशोर की जान चली गई। उसने कथित तौर पर फोर्स की 68 वीं बटालियन के कमांडेंट आर.के.

बिर्दी की शह पर गोली चलाई थी। गोलीबारी का कारण, जैसा कि अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया है, यदि सच है तो भयावह है। आर.के. बिर्दी 5 फरवरी, 2010 को कंपोजिट अस्पताल, हुमहामा में वार्षिक मेडिकल जांच के लिए गए थे। शाम 4.40 बजे फोर्स के निशात श्रीनगर स्थित मुख्यालय के रास्ते में, अन्य फोर्स के कर्मियों के साथ वापस लौटते समय, वे ट्रेफिक जाम में फंस गये। इसके कारण बुलेवार्ड रोड, ब्रेन, श्रीनगर पर मौजूद कुछ लडकों के साथ बोलचाल शुरू हो गई। मौखिक द्वंद ने भयावह रूप ले लिया और फोर्स के जवानों ने लडकों का पीछा करना शुरू कर दिया। यह आरोप है कि आर.के. बिर्दी की शह पर कांस्टेबल लखविंदर कुमार ने दो बार गोलियां चलाई और एक गोली जाहिद फारूक शेख को लगी। जाहिद की आग्नेयास्त्र की चोट से तुरंत मृत्यु हो गई। उपरोक्त घटना के कारण पुलिस स्टेशन, निशात में एफ आई आर संख्या 4/2010 दर्ज की गई। यहां यह बताना प्रासंगिक होगा कि फोर्स के कमांडेंट ने अपने पत्र दिनांक 10.02.2010 द्वारा जांच पुलिस को सौंपी थी। मामले की जांच स्थानीय पुलिस द्वारा बिना किसी शिकायत के की गई और जांच के दौरान, आर. के. बिर्दी और लखविंदर कुमार दोनों गिरफ्तार किये गये थे।

जांच पूरी होने पर, पुलिस ने 05 अप्रैल, 2010 को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्रीनगर के समक्ष रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109 और 201 के तहत अपराध कारित करने के लिए दोनों अभियुक्तों के खिलाफ आरोप पत्र प्रस्तुत किया, जिसके बाद फोर्स की ओर से एक प्रार्थना पत्र, सुरक्षा बल न्यायालय में अभियुक्तों के विचारण के विकल्प का प्रयोग करने के लिए समय की मांग करते हुए पेश किया गया। तदनुसार, 6 अप्रैल, 2010 को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्रीनगर के समक्ष उप महानिरीक्षक, स्टेशन मुख्यालय, सीमा सुरक्षा बल, श्रीनगर द्वारा एक आवेदन दायर किया गया था जिसमें अन्य बातों के अलावा यह कहा गया था कि कमांडेंट आर.के बिर्दी, और कांस्टेबल लखविंदर कुमार के विरूद्ध आपराधिक मामला लंबित है और वे उसकी कमान के अधीन कार्य कर रहे हैं और वे दोनों न्यायिक हिरासत में हैं। उसने आगे कहा कि सीमा सुरक्षा बल अधिनियम,1968 (इसके बाद इसे ''अधिनियम'' कहा जाएगा) की धारा 80 के तहत अपने विवेक का प्रयोग करते हुए उसने सुरक्षा बल न्यायालय के समक्ष उनके खिलाफ कार्यवाही शुरू करने का फैसला लिया है। उपरोक्त आधार पर कार्यवाही पर रोक लगाने और आरोपी व्यक्तियों को सभी संबंधित दस्तावेजों और प्रदर्शों के साथ सुरक्षा बल न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए भेजने का अनुरोध किया गया था। यह प्रार्थना पत्र, दंड प्रक्रिया संहिता, 1989 की धारा 549, जैसा कि जम्मू और कश्मीर राज्य में लागु हुआ, के प्रकाश में दायर किया गया था। आगे यह भी कहा गया कि

जम्मू-कश्मीर आपराधिक न्यायालय और कोर्ट मार्शल (क्षेत्राधिकार का समायोजन) नियम, 1983 के नियम 7 के तहत अभियुक्तों के मुकदमे की नतीजे की जानकारी अदालत को दी जाएगी। जम्मू कश्मीर राज्य और मृतक के चाचा गुलाम मोहम्मद शेख द्वारा फोर्स के निवेदन का विरोध किया गया था। मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अपने आदेश दिनांक 2 नवंबर, 2010 द्वारा कमांडेंट द्वारा पेश प्रार्थना पत्र को स्वीकार कर लिया और आरोपियों को सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारित किये जाने के लिए आरोप पत्र और जांच एजेंसी द्वारा एकत्रित की गई अन्य सामग्री के साथ सौंप दिया। ऐसा करते समय, विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने निम्नानुसार लिखाः

''उपरोक्त विवेचन के प्रकाश में यह प्रकट किया गया है कि आरोपियों ने सक्रिय ड्यूटी के दौरान कथित अपराध किया है और मामला स्पष्ट रूप से बी एस एफ अधिनियम की धारा 47 के सामान्य प्रावधानों के प्रथम अपवाद के अंतर्गत आता है, जिसके लिए आवेदक के पास यह विकल्प उपलब्ध है कि या तो उन पर बी एस एफ कोर्ट में मुकदमा चलाया जाए या सामान्य क्षेत्राधिकार के आपराधिक न्यायालय को उनके मुकदमे को आगे बढाने दिया जाए। इस मामले में आवेदक ने उन पर बीएसएफ कोर्ट में मुकदमा चलाने का विकल्प चुना है। इसलिए, इस अदालत के पास

आरोपियों को, आरोप पत्र और जांच एजेंसी द्वारा एकत्रित की गई अन्य सामग्री के साथ आवेदक को बीएसएफ न्यायालय में मुकदमा चलाने के लिए सौंपने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। इसलिए प्रार्थना पत्र स्वीकार किया जाता है और आरोपियों को आरोप पत्र और सहायक सामग्री व साथ ही जब्त किये गये सामान के साथ प्रार्थी की हिरासत में सौंपने का आदेश दिया जाता है। संबंधित अधिकारी आरोपियों का शीघ्रता से विचारण करेगा

और मामले के पूरा होते ही उसके अंतिम नतीजे से इस न्यायालय को अवगत करवायेगा''

2. उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर गुलाम मोहम्मद शेख और जम्मू-कश्मीर राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष अलग-अलग पुनरीक्षण आवेदन दायर किए। दोनों आवेदनों पर उच्च न्यायालय ने एक साथ सुनवाई की और 21 अक्टूबर, 2011 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया। यह इस आदेश के खिलाफ है कि जम्मू और कश्मीर राज्य और गुलाम मोहम्मद शेख ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अलग अलग विशेष अनुमति याचिकाएं दायर की है।

3. अनुमति दी गई।

4. हमारे द्वारा अपीलकर्ता, जम्मू और कश्मीर राज्य की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गौरव पचनंदा और अपीलकर्ता गुलाम मोहम्मद शेख की ओर से वकील सुश्री कामिनी जायसवाल को सुना गया। हमारे द्वारा भारत

के विद्वान सॉलिसिटर जनरल श्री आर.एफ. नरीमन को भी सुना गया। नोटिस की तामील के बावजूद, प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 क्रमशः लखविंदर कुमार आर.के. बर्दी उपस्थित नहीं हुए है।

5. यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि अधिनियम की धारा 47 सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा अधिनियम के अधीन किसी ऐसे व्यक्ति के मुकदमे पर रोक लगाती है, जिसने हत्या या गैर इरादतन हत्या का अपराध किया है या किसी ऐसे व्यक्ति के संबंध में बलात्कार किया है जो इस अधिनियम के अधीन नहीं है। हालांकि, यदि अधिनियम के अधीन व्यक्ति ने सक्रिय ड्यूटी पर रहते हुए अपराध किया है तो यह बार काम नही करेगा। दूसरे शब्दों में, यदि बल का कोई सदस्य उपर निर्दिष्ट प्रकृति का अपराध करता है और अपराध का शिकार व्यक्ति एक नागरिक सदस्य है, तो वह सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारित नहीं किया जा सकता है, लेकिन यदि अपराध सक्रिय ड्यूटी के समय किया गया हो तो यह रोक लागू नहीं होगी। अभिव्यक्ति 'सक्रिय कर्तव्य को अधिनियम की धारा 2(1) (ए) के तहत परिभाषित किया गया है, यह इस प्रकार हैः

धारा - 2. परिभाषाएं (1) इस अधिनियम में, जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,-

(ए) इस अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति के संबंध में ''सक्रिय कर्तव्य का अर्थ उस अवधि के दौरान बल के सदस्य के रूप में कोई भी

कर्तव्य है जिसमें ऐसा व्यक्ति बल की एक इकाई से जुडा हुआ है, या उसका हिस्सा है-

(i) जो किसी दुश्मन के खिलाफ ऑपरेशन में लगा हुआ है, या

(ii) जो किसी पिकेट पर काम कर रहा है या भारत की सीमाओं पर गश्त या अन्य गार्ड ड्यूटी पर लगा हुआ है,

और इसमें केंद्र सरकार द्वारा अधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा सक्रिय ड्यूटी की अवधि के रूप में घोषित किसी भी अवधि के दौरान ऐसे व्यक्ति द्वारा की गई ड्यूटी शामिल है जो किसी भी क्षेत्र के संदर्भ में जिसमें इस अधिनियम के अधीन कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का वर्ग सेवा कर रहा हो;''

6. उपरोक्त प्रावधान उसमें निर्दिष्ट प्रकृति के कर्तव्य को सक्रिय कर्तव्य बनाता है और इसमें आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा केंद्र सरकार द्वारा घोषित कर्तव्य शामिल है। उपरोक्त को स्पष्ट रूप से पढने से, यह स्पष्ट है कि

बल के सदस्य के रूप में कोई भी कर्तव्य और खंड (i) और (ii) में गिना गया है, यानी, दुश्मन के खिलाफ ऑपरेशन में लगे हुए हैं या पिकेट पर काम कर रहे हैं या गश्त पर लगे हुए हैं या भारत की सीमाओं पर

अन्य गार्ड ड्यूटी सक्रिय ड्यूटी की परिभाषा में आएंगी। इसमें बल के सदस्य द्वारा आधिकारिक राजपत्र में केंद्र सरकार द्वारा घोषित सक्रिय कर्तव्य के रूप में ऐसा कर्तव्य भी शामिल होगा।

7. केंद्र सरकार ने अधिनियम की धारा 2(1)(ए) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए अधिसूचना एस ओ. 1473(ई) दिनांक 8 अगस्त, 2007 द्वारा एक घोषणा की थी कि राज्य में सेवारत प्रत्येक कार्मिक का कर्तव्य जैसा कि उक्त अधिसूचना में बताया गया है, 01 जुलाई 2007 से 30 जून 2010 की अवधि के लिए' '
एवं कश्मीर राज्य उक्त अधिसूचना के क्रम संख्या 16 पर है।

8. यह सामान्य आधार है कि किया गया अपराध एक नागरिक अपराध है जिसकी सुनवाई आपराधिक न्यायालय द्वारा की जा सकती है और अपराध के समय, आरोपी व्यक्ति किसी भी दुश्मन के खिलाफ किसी ऑपरेशन में शामिल नहीं थे या किसी पिकेट पर काम नहीं कर रहे थे या गश्त पर नहीं लगे थे या भारत की सीमाओं पर अन्य सुरक्षा ड्यूटी पर नहीं थे। अपीलकर्ताओं के अनुसार, आरोपी व्यक्ति किसी भी वैध आदेश के अनुसार उपर निर्दिष्ट प्रकृति के कर्तव्य में नहीं लगे थे, इसलिए, उन्हे सक्रिय ड्यूटी पर नहीं कहा जा सकता है ताकि बल को सुरक्षा बल न्यायालय के समक्ष उन पर मुकदमा चलाने का अधिकार क्षेत्र मिल सके। विद्वान सॉलिसिटर जनरल इस मुद्दे में शामिल नहीं हुए और यह स्वीकार

करते है कि आरोपी व्यक्ति अधिनियम की धारा 2(1)(ए) के खंड (i) और (ii) में उल्लेखित प्रकृति का कर्तव्य नहीं निभा रहे थे, लेकिन उनके अनुसार केंद्र सरकार की घोषणा के मद्देनजर, उनका कार्य सक्रिय कर्तव्य की समावेशी परिभाषा के अंतर्गत आएगा।

9. बल के सदस्यों के रूप में उनके कर्तव्य और संबंधित अपराध के बीच कोई संबंध नहीं है, दूर-दूर तक भी नहीं। अपराध की स्थिति न तो बल के नियंत्रण में थी और न ही अपराध का शिकार व्यक्ति किसी भी तरह से बल से जुडा था। लेकिन, अधिसूचना के लिए, ये उत्तर देेने के लिए पर्याप्त हो सकते थे कि अपराध के समय आरोपी व्यक्ति सक्रिय ड्यूटी पर नहीं थे।

हालांकि, इस प्रश्न का उत्तर अधिनियम की धारा 2(1)(ए) के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए जारी अधिसूचना के प्रभाव पर निर्भर करेगा। इस खंड को पढने से यह स्पष्ट है कि 'सक्रिय कर्तव्य में केंद्र सरकार द्वारा आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा सक्रिय कर्तव्य की अवधि के रूप में घोषित किसी भी अवधि के दौरान ऐसे व्यक्ति की ड्यूटी शामिल होगी। धारा 2(1)(ए) को अधिनियम की परिभाषा भाग में जगह मिलती है।

10. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि विधायिका के पास किसी शब्द को कृत्रिम रूप से भी परिभाषित करने का अधिकार है और ऐसा करते समय, यह या तो उसके सामान्य अर्थ को सीमित कर सकता है या

उसी के व्यापक अर्थ को सीमित कर सकता है। जब विधायिका परिभाषा खंड में ''साधन'' अभिव्यक्ति का उपयोग करती है, तो परिभाषा प्रथम दृष्टया प्रतिबंधात्मक और संपूर्ण होती है। हालांकि, परिभाषा खंड में ''शामिल है'' अभिव्यक्ति का उपयोग इसे व्यापक बनाता है। कई बार, जैसा कि वर्तमान मामले में, विधायिका ने ''साधन'' और ''शामिल'' दोनों शब्दों का उपयोग किया है और इसलिए, ''सक्रिय कर्तव्य अभिव्यक्ति की परिभाषा को संपूर्ण माना जाता है। हमारी राय में, ''शामिल'' शब्द का उपयोग ''सक्रिय कर्तव्य शब्द के अर्थ को बढाता है और इसलिए, इसका मतलब न केवल खण्ड में निर्दिष्ट कर्तव्य होगा, बल्कि वे कर्तव्य भी होंगे जो केंद्र सरकार द्वारा आधिकारिक राजपत्र द्वारा घोषित किए गए हैं। केंद्र सरकार द्वारा जारी अधिसूचना में कहा गया है कि जम्मू और कश्मीर राज्य में सेवारत बल के प्रत्येक व्यक्ति की ड्यूटी 1 जुलाई 2007 से 30 जून, 2010 तक सक्रिय ड्यूटी के रूप में लागू होगी। अधिसूचना कर्तव्य की प्रकृति का कोई संदर्भ नहीं देती है, लेकिन उस स्थान पर जोर देती है जहां बल के सदस्य सेवा कर रहे हैं, जो 'सक्रिय कर्तव्य की परिभाषा के अंतर्गत आता है। उपरोक्त के मद्देनजर, इस निष्कर्ष से बचा नहीं जा सकता कि अपराध के समय आरोपी व्यक्ति सक्रिय ड्यूटी पर थे।

11. हमने उपर जो पाया है उसका स्वाभावित परिणाम यह है कि अधिनियम की धारा 47 में प्रदान की गई सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा

मुकदमे की रोक लागू नहीं होगी। अधिनियम की धारा 47 जो इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है, इस प्रकार हैः

"47. सिविल अपराध जो सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारणीय नहीं है।- इस अधिनियम के अधीन कोई व्यक्ति जो हत्या या गैर इरादतन हत्या का अपराध करता है, या किसी ऐसे व्यक्ति के संबंध में बलात्कार करता है जो इस अधिनियम के अधीन नहीं है। इस अधिनियम के विरूद्ध अपराध का दोषी माना जाएगा और उस पर सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमा नहीं चलाया जाएगा, जब तक कि वह उक्त अपराधों में से कोई भी अपराध नहीं करता हो,-

(ए) सक्रिय कर्त्तव्य पर रहते हुए; या

(बी) भारत के बाहर किसी भी स्थान पर; या

(सी) इस संबंध में अधिसूचना द्वारा केंद्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट किसी भी स्थान पर।"

12. उपरोक्त प्रावधान यह स्पष्ट करता है कि हत्या या गैर इरादतन हत्या या बलात्कार के अपराध के आरोपी बल के किसी सदस्य पर सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमा नहीं चलाया जाएगा, जब तक कि अपराध सक्रिय ड्यूटी पर रहते हुए नहीं किया गया हो। जैसा कि हमने पाया कि

आरोपी व्यक्तियों ने विस्तारित अर्थ के भीतर सक्रिय ड्यूटी पर रहते हुए अपराध किया है, अधिनियम की धारा 47 के तहत बाधा सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण के लिए उनके रास्ते में नहीं आएगी। हालांकि, सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण की रोक हटा दी गई है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अभियुक्त ने अधिनियम की धारा 47 में दर्शायी प्रकृति का अपराध किया है, उसका आवश्यक रूप से सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण किया जाएगा। इस मामले में, सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाने पर रोक नहीं हो सकती है, लेकिन फिर भी किसी अभियुक्त पर आपराधिक न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, ऐसी स्थिति में, मुकदमे का विकल्प आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय के बीच होता है। इस स्थिति की कल्पना अधिनियम की धारा 80 के तहत की जाती है, जो इस प्रकार हैः

"80. आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय के बीच चयन- जब एक आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय के पास किसी अपराध के संबंध में प्रत्येक क्षेत्राधिकार होता है, तो यह महानिदेशक, या महानिरीक्षक या उपमहानिरीक्षक के विवेक पर निर्भर होगा,

जिसकी कमान में आरोपी व्यक्ति सेवारत है या ऐसा कोई अन्य अधिकारी जो निर्धारित किया जा सकता है, यह तय करेगा कि कार्यवाही किस अदालत के समक्ष शुरू की जाएगी, और यदि वह अधिकारी यह

निर्णय लेता है कि उन्हे सुरक्षा बल अदालत के समक्ष शुरू किया जाएगा, यह निर्देश दें कि आरोपी व्यक्ति को बल की हिरासत में रखा जाएगा।''

13. जैसा कि हमने उपर देखा है, वर्तमान मामले में, आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय प्रत्येक के पास उस अपराध के मुकदमे की सुनवाई का क्षेत्राधिकार है जिसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा करने का आरोप लगाया गया है। ऐसी आकस्मिक स्थिति में अधिनियम की धारा 80 उस बल के महानिदेशक या महानिरीक्षक या उप-महानिरीक्षक को, जिनकी कमान में आरोपी व्यक्ति कार्यरत है, यह निर्णय लेने का विवेक प्रदान किया गया है कि कार्यवाही किस अदालत के समक्ष शुरू की जाएगी। अधिनियम की धारा 141 क्रेद्र सरकार को अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी करने के उद्देश्य से नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। यहां यह बताना प्रासंगिक है कि कंेद्र सरकार ने अधिनियम की धारा 141 (1) और (2) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 बनाए हैं, जिन्हे इसके बाद ''नियम'' के रूप में संदर्भित किया गया है। नियमों का अध्याय टप् सुरक्षा बल न्यायालय और आपराधिक न्यायालय के बीच क्षेत्राधिकार के चयन के संबंध में है। इस प्रकार, अधिनियम की धारा 80 के तहत विवेक का प्रयोग करने के लिए, नियम बनाए गए हैं और नियमों का नियम 41, जो इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है, इस प्रकार हैः

"41. मामलों की सुनवाई या तो सुरक्षा बल न्यायालय या आपराधिक अदालत द्वारा की जाती है-(1) जहां किसी अपराध की सुनवाई आपराधिक अदालत और सुरक्षा बल अदालत दोनों द्वारा की जाती है, धारा 80 में निर्दिष्ट एक अधिकारी,-

(i)(ए) जहां अभियुक्त द्वारा बल के सदस्य के रूप में अपने कर्तव्य के पालन के दौरान अपराध किया जाता है, या

(ब) जहां अपराध सरकार या बल या अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति की संपत्ति के संबंध में किया गया है, या

(सी) जहां अपराध अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति के खिलाफ किया जाता है,

निर्देश दें कि अधिनियम के अधीन कोई भी व्यक्ति, जिस पर ऐसा अपराध करने का आरोप है, उस पर अदालत द्वारा मुकदमा चलाया जाए; और

(ii)किसी अन्य मामले में, यह तय करें कि अनुशासन के हित में अधिनियम के अधीन किसी भी व्यक्ति, जिस पर ऐसा अपराध करने का आरोप है, द्वारा मुकदमे की सुनवाई के लिए दावा करना आवश्यक होगा या नहीं।

(2)अदालत द्वारा मुकदमे के लिए किसी अपराधी का दावा करने का निर्णय लेते समय, धारा 80 में निर्दिष्ट एक अधिकारी निम्नलिखित सभी या किसी भी कारक को ध्यान में रख सकता है, अर्थात्:-

(ए) अपराधी सक्रिय ड्यूटी पर है या उसे सक्रिय ड्यूटी के लिए चेतावनी दी गई है और ऐसा महसूस किया जाता है कि वह ऐसी ड्यूटी से बचने की कोशिश कर रहा है;

(बी) अपराधी एक युवा व्यक्ति है जो प्रशिक्षण ले रहा है और अपराध गंभीर नहीं है और आपराधिक अदालत द्वारा अपराधी का मुकदमा उसके प्रशिक्षण को सारवान रूप से प्रभावित करेगा।

(सी) मामले की प्रकृति को देखते हुए, अपराधी पर अधिनियम के तहत संक्षेप में कार्यवाही की जा सकती है।"

14. नियमो के नियम 2(सी) में न्यायालय का अर्थ सुरक्षा बल न्यायालय है। नियम 41(1) को पढने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां अपराध बल के सदस्य के रूप में कर्तव्य पालन के दौरान किया गया है या जहां अपराध सरकार या बल की संपत्ति के संबंध में किया गया है या अधिनियम के अधीन एक व्यक्ति या जहां अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति के खिलाफ अपराध किया जाता है, अधिनियम की धारा 80 के तहत शक्ति का प्रयोग करने में सक्षम अधिकारी यह निर्देश दे सकता है कि बल

के जिन सदस्यों ने अपराध किया है, उन पर एक सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया जाए।

वर्तमान मामले में आरोप यह नहीं दर्शाते है कि आरोपी ने बल के सदस्य के रूप में कर्तव्य के प्रदर्शन के दौरान अपराध किया है या सरकार या बल या अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति की संपत्ति के संबंध में या अधिनियम के अधीन एक व्यक्ति के विरूद्ध अपराध किया गया था। मामले के उस दृष्टिकोण में उपरोक्त साम्रगी संतुष्ट नही है और इसलिए सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा आरोपी व्यक्तियों के मुकदमें के लिए आवश्यक क्षेत्राधिकार संबंधी तथ्य मौजूद नही है। नियम 41(1)(ii) सक्षम अधिकारी को अधिनियम की धारा 80 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए यह निर्णय लेने के लिए अधिकृत करता है कि सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा परीक्षण के लिए दावा करना अनुशासन के हित में आवश्यक होगा या नही। यहां यह उल्लेखनीय है कि नियम 41(2) उन कारकों की गणना करता है जिन्हें अधिनियम की धारा 80 के तहत सक्षम अधिकारी को सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा किसी आरोपी के मुकदमें का निर्णय लेने के लिए ध्यान में रखना होता है। वर्तमान मामले के तथ्यों में नियम 41(1)(i) और 41(1)(ii) का कोई खंड लागू नही होता है। वह शर्त जिसके तहत प्राधिकारी विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है, नियमों के नियम 41(1)(ii) के तहत प्रदान किया गया है।

15. हमें यहां एक सहायक प्रस्तुतिकरण का उत्तर देना होगा। यह इंगित किया गया है कि अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी बनाने के लिए बनाए गए नियमों को इसके अनुरूप होना चाहिए और यदि कोई नियम अधिनियम द्वारा निर्धारित विचारों से परे जाता है या उसके विरोधाभासी है, तो नियम को अधिनियम के अनुरूप होना चाहिए। इस बात पर जोर दिया गया है कि अधिनियम की धारा 80 उस अधिकारी को विवेकाधिकार प्रदान करती है जिसकी कमान के भीतर अभियुक्त व्यक्ति बिना किसी शर्त के आपराधिक न्यायालय और सुरक्षा बल न्यायालय के बीच चयन कर रहा है, जबकि नियमों का नियम 41 विवेकाधिकार के प्रयोग के लिए आधार निर्दिष्ट करता है। तदनुसार, यह प्रस्तुत किया गया है कि यह नियम अधिनियम की धारा 80 के अनुरूप होना चाहिए। हमें इस निवेदन में कोई सार नही पाते है।

16. विधायिका द्वारा नियम बनाने की शक्ति प्रदान करने के लिए अपनाई जाने वाली सबसे आम पद्धति में से एक है पहले सामान्य शब्दों में प्रावधान करना, यानि अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी बनाना और फिर विशेष रूप से कहना और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना प्रगणित मामलों में नियम प्रदान कर सकते है।

अधिनियम की धारा 141 जो वर्तमान अपील से सम्बन्धित है, केन्द्र

सरकार को इस प्रकृति के नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। इसे इस प्रकार पढा जाता है -

"141 नियम बनाने की शक्ति (1) केन्द्र सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी करने के उद्देश्य से नियम बना सकती है।

(2) विशेष रूप से और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम प्रदान कर सकते है, -

बल का संविधान, शासन, कमान ओर अनुशासन,

बल में व्यक्तियों का नामांकन और बल के अन्य सदस्यों की भर्ती,

बल के सदस्यों के वेतन और भत्ते से कटौती सहित सेवा की शर्ते,

इस अधिनियम के अधीन अधिकारियों, अधीनस्थ अधिकारियों, अवर अधिकारियों और अन्य व्यक्तियों की रैंक वरीयता, कमान की शक्तियां और अधिकार

इस अधिनियम के अधीन व्यक्तियों का सेवा निष्कासन, सेवानिवृति, रिहाई या मुक्ति,

धारा 13 के तहत निर्धारित किये जाने वाले उद्देश्य और अन्य मामलें,

सुरक्षा बल अदालतों का आयोजन, गठन, स्थगन, विघटन और बैठकें, ऐसी

अदालतों द्वारा मुकदमों में पालन की जाने वाली प्रक्रिया, वे व्यक्ति जिनकें द्वारा ऐसे मुकदमों में किसी अभियुक्त का बचाव किया जा सकता है और ऐसे व्यक्तियों की उपस्थिति,

सुरक्षा बल न्यायालयों के निष्कर्षो और सजाओं की पुष्टि, पुनरीक्षण और निरस्तीकरण और उनके खिलाफ याचिकाए

सुरक्षा बल न्यायालय

सुरक्षा बल न्यायालयों और मृत्यु, कारावास और निरोध, अवार्ड और सजा से संबंधित इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत दिए जाने वाले आदेशों के रूप,

सुरक्षा बल न्यायालयों की सजाओं को लागू करना,

इस अधिनियम को क्रियान्वयन में लाने के उद्देश्य से आवश्यक कोई भी मामला, जहां तक यह इस अधिनियम के तहत विचारणीय या दंडनीय अपराधों की जांच, गिरफ्तारी, हिरासत, परीक्षण और सजा से संबंधित है,

बल में मनाए जाने वाले समारोह और दिए जाने वाले सम्मान चिन्ह,

जांच न्यायालयों का आयोजन, गठन, प्रक्रिया और अभ्यास, उनके समक्ष गवाहों को बुलाना और ऐसे न्यायालयों द्वारा शपथ का प्रशासन,

मुख्य विधि अधिकारी और विधि अधिकारियों की भर्ती और सेवा की शर्ते,

कोई अन्य मामला जो निर्धारित किया जाना है, या निर्धारित किया जा सकता है या जिसके संबंध में यह अधिनियम कोई प्रावधान नही करता है या अपर्याप्त प्रावधान करता है और प्रावधान, केन्द्र सरकार की राय में, इस अधिनियम के उचित क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है।

(3) इस अधिनियम के तहत बनाए गए प्रत्येक नियम को इसके बनने के बाद जितनी जल्दी हो सके, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा, जबकि यह सत्र में तीस दिनों की कुल अवधि के लिए होगा जो एक सत्र या दो में शामिल हो सकता है। अधिक क्रमिक सत्र, और यदि सत्र के तुरंत बाद सत्र की समाप्ति से पहले या

उपरोक्त क्रमिक सत्रों में दोनो सदन सहमत है नियम में कोई संशोधन करना या दोनो सदन सहमत हो कि नियम नही बनाया जाना चाहिए, इसके बाद नियम केवल ऐसे संशोधित रूप में प्रभावी होगा या कोई प्रभाव नही होगा, जैसा भी मामला हो, हालांकि इस तरह का कोई भी संशोधन या रद्दीकरण उस नियम के तहत पहले की गई किसी भी चीज की वैधता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा।''

17. हमारी राय में जब शक्ति सामान्य रूप से और उसके बाद प्रगणित मामलों कें संबंध में प्रदान की जाती है जैसा कि वर्तमान मामले

में निर्दिष्ट विषय के संबंध में विशिष्टीकरण को केवल उदाहरणात्मक माना जाता है और यह सामन्य शक्ति के दायरे को सीमित नही करता है। इस संबंध में इस न्यायालय के रोहतक और हिसार डिस्ट्रिक्ट इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड बनाम यूपी राज्य, एआईआर 1966 एससी 1471 के मामले में दिए गए फैसले का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें इसे इस प्रकार माना गया है,

"...............धारा 15 (1) अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए नियम बनाने के लिए उपयुक्त सरकार को व्यापक शक्तियां प्रदान करती है और धारा 15 (2) खंड (ए) से (ई) द्वारा गिनाए गए कुछ मामलों को निर्दिष्ट करती है जिसके संबंध में नियम बनाए जा सकते है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि उप-धारा (2) द्वारा विशेष मामलों की गणना उचित सरकार को धारा 15 की उपधारा (1) के द्वारा प्रदत शक्तियों की चौडाई को नियंत्रित या सीमित नही करेगी और इसलिए यदि ऐसा प्रतीत होता है कि उपयुक्त सरकार द्वारा जोडी गई वस्तु का रोजगार की शर्तो से संबंध है तो इसके जोड को कानून में अमान्य होने के रूप में चुनौती नही दी जा सकती........."

18 प्रिवी काउंसिल ने भारत की रक्षा नियमों के नियम 26 की वैधता को बनाए रखने के लिए सम्राट बनाम सिबनाथ बनर्जी, एआईआर 1945 पीसी 156 के मामले में इस सिद्धांत को लागू किया, जो प्रगणित प्रावधान

के अन्तर्गत यद्यपि अभिव्यक्त शक्ति के अधीन पाया गया लेकिन सामान्य शक्ति के अंतर्गत कवर किया गया। फैसले का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है,

"न्यायाधिपति भारत रक्षा अधिनियम की धारा 2 की उपधाराओं (1) और (2) की सापेक्ष स्थिति के बयान पर संघीय न्यायालय के विद्वान मुख्य न्यायाधीश से सहमत होने में असमर्थ है और वर्तमान अपील में प्रत्यर्थियों के वकील उस कथन का समर्थन करने में असमर्थ थे या यह बनाए रखने में असमर्थ थी कि नियम 26 अमान्य था। विद्वान न्यायाधिपति की राय में, उपधारा (2) का कार्य केवल एक उदाहरण है, नियम बनाने के शक्ति उपधारा (1) द्वारा प्रदान की जाती है और "नियम" जो उपधारा (2) के शुरूआती वाक्य में संदर्भित है, वे नियम है जो उपधारा (1) द्वारा अधिकृत है और इसके तहत बनाए गए है और इसके तहत बनाए गए है, उपधारा के प्रावधान धारा (2) उपधारा (1) पर प्रतिबंध नही लगाते है, जैसा कि वास्तव में उपधारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों की व्यपाकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना "शब्दों द्वारा स्पष्ट रूप से कहा गया है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायाधीश ने स्वंय सोचा है कि उपधारा (1) की सामान्य भाषा नियम 26 की शर्तो को काफी हद तक उचित ठहराती है और किसी भी आलोचना से बचती है जो विद्वान न्यायाधीश ने उपधारा (2) के संबंध में व्यक्त की है।

इसलिये न्यायाधिपति की राय है कि केशव तलपडे बनाम सम्राट

आई.एल.आर. (1994) बम्बई 183 संघीय न्यायालय द्वारा गलत तरीके से तय किया गया था और भारत रक्षा अधिनियम की धारा (2) की उपधारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अनुरूप नियम 26 बनाया गया था....''

19.अफजल उल्लाह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 1964 एससी 264 के मामले में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने सिबनाथ बनर्जी (सुप्रा) के मामले में प्रिवी काउंसिल द्वारा निर्धारित कानून को मंजूरी के साथ उद्धृत किया और माना कि प्रगणित उपबन्ध सामान्य शब्दों को नियंत्रित नहीं करते क्यांेकि विषयों का विशेषीकरण उदाहरणात्मक प्रकृति का है। इसे इस प्रकार पढा जाता है -

''13. भले ही उक्त खंड विवादित उप-कानून को उचित नही ठहराते इसमें थोडा संदेह हो सकता है कि उक्त उप कानून धारा 298(1) द्वारा बोर्डो को प्रदत्त सामान्य शक्ति द्वारा उचित होगे। यह अब सुस्थापित है

धारा 298(2) के कई खंडों में निहित विशिष्ट प्रावधान केवल उदाहरणात्मक है और उन्हें सम्राट बनाम सिबनाथ बनर्जी, एआईआर 1945 पीसी 156 के तहत धारा 298(1) द्वारा निर्धारित शक्तियों की व्यापकता के प्रतिबंधक के रूप में नही पढा जा सकता है। यदि धारा 298(1) द्वारा निर्दिष्ट शक्तियां बहुत व्यापक है और वे अपने दायरे में उन

उपनियमों को लेते है जो हम से संदर्भित है। वर्तमान अपील में यह नही कहा जा सकता है कि धारा 298(2) के तहत प्रगणित शक्तियां धारा 298(1) द्वारा प्रयुक्त सामान्य शब्दों को नियंत्रित करती है। ये बाद वाले खंड केवल व्याख्या करते है और बोर्ड को प्रदत्त सभी शक्तियों को समाप्त नहीं करते है, ताकि धारा 298(2) द्वारा निर्दिष्ट शक्तियों के अंतर्गत न आने वाले किसी भी मामले को धारा 298(1) द्वारा अच्छी तरह से संरक्षित किया जा सके, बशर्ते, विवादित उपविधि को 298(1) की आवश्यकता के संदर्भ में उचित ठहराया जा सकता है। इसमें कोई संदेह नही हो सकता है कि प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा बनाए गए बाजारों के संबंध में लागू उप कानून अधिनियम के तहत नगरपालिका प्रशासन को आगे बढाने के लिए है और इसलिए धारा 298(1) के प्रावधानों को आकर्षित करेगे। इसलिए हम संतुष्ट है कि उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुचने में सही था कि विवादित उपनियम वैध है।

20. उपर हमने जो देखा उसके मद्देनजर यह स्पष्ट है कि नियमों का नियम 41 अधिनियम के प्रावधानों को प्रभवाी बनाने के लिए बनाया गया है। हमारी राय में यह अधिनियम में जो विचार किया गया है उससे आगे नही गया है या किसी भी तरह से इसके विपरीत नहीं है। इसलिये, इसे ऐसे माना जाना चाहिए जैसे कि यह अधिनियम में निहित है। अधिनियम की धारा 80 के तहत निर्दिष्ट अधिकारी को आपराधिक न्यायालय और

सुरक्षा बल न्यायालय के बीच चयन करने के लिए व्यापक विवेक दिया गया है, लेकिन नियम 41 अधिनियम के प्रावधान को प्रभावी बनाने के लिए उस विवेक के प्रयोग के लिए दिशानिर्देश निर्धारित किए थे। इस प्रकार हमारी राय में नियम 41 न तो अधिनियम में बताई गई बातों से आगे गया है और न ही किसी भी तरह से इसे प्रतिस्थापित किया है और इसलिए कमांडिंग ऑफिसर को विवेक के प्रयोग के लिए निर्धारित दिशानिर्देशों को ध्यान में रखना होगा।

21 यह जांचने के लिए कि क्या कमांडिंग ऑफिसर जिसने अधिनियम की धारा 80 के तहत शक्ति का प्रयोग किया था, उपरोक्त आवश्यकता को पूरा करता है, इस संबंध में उसके द्वारा दायर आवेदन को पुनः प्रस्तुत करना उपयुक्त है। आवदेन का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः

"जबकि पुलिस स्टेशन निशात की एफआईआर संख्या 4/201 के तहत एक अपाराधिक मामला राज्य बनाम लखविंदर कुमार और अन्य शीर्षक से लखविंदर कुमार और रणधीर कुमार बिरदी के खिलाफ आपके न्यायालय के समक्ष निर्णय के लिए लंबित है।

2.जबकि उक्त आरोपी व्यक्ति लखविंदर कुमार (बटालियन 68 बी एन बीएसएफ के कांस्टेबल नंबर 01005455) और रणधीर कुमार बिरदी (कमांडेंट बीएसएफ) मेरी कमान में कार्यरत है और

3. जबकि बीएसएफ अधिनियम, 1968 की धारा 80 में परिकल्पित अपने विवेक का प्रयोग करते हुए, मैंने सीमा सुरक्षा बल न्यायालय के समक्ष उक्त आरोपी व्यक्तियों लखविंदर कुमार और रणधीर कुमार बिरदी के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने का निर्णय लिया है।

4. जबकि, आरोपी व्यक्ति यानी लखविंदर कुमार और रणधीर कुमार बिरदी वर्तमान में न्यायिक हिरासत में है और अपके नियंत्रण में है।

5. इसलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि दोनों आरोपी व्यक्तियें के खिलाफ आपकी अदालत में कार्यवाही पर रोक लगाये और बीएसएफ अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत उनके खिलाफ कार्यवाही शुरू करने के लिए सीआरपीसी 1989 (जे एंड के) की धारा 549 के अनुसार इस मामले से जुड़े सभी दस्तावेजों और प्रदर्शों और आरोपी व्यक्ति की हिरासत को अधोहस्ताक्षरकर्ता को प्रेषित करें।

6. सीमा सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा आरोपी व्यक्तियों के मुकदमें के परिणाम या उनके खिलाफ शुरू की गई प्रभावी कार्यवाही के परिणाम को जम्मू-कश्मीर आपराधिक न्यायालयों और कोर्ट मार्शल (क्षेत्राधिकार का समायोजन) नियम, 1983 के नियम 7 के अनुसार सूचित किया जाएगा।

22. इस प्रकार, कमांडिंग ऑफिसर ने अधिनियम की धारा 80 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग किया है और यह कहने के अलावा कि उक्त शक्ति का प्रयोग अपने विवेक से किया गया है, इस बारे में कोई फुसफुसाहट भी नहीं है कि आरोपी के सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण के लिए उक्त विवेक का प्रयोग क्यों किया गया है। कमांडिंग ऑफिसर ने यह कहीं नहीं कहा है कि सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा आरोपी का मुकदमा बल न्यायालय द्वारा आरोपी का विचारण बल के अनुशासन के हित में आवश्यक है। एक बार अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी करने के लिए वैधानिक दिशानिर्देश जारी किए जाने के बाद, हमारी राय में, उन दिशानिर्देशों का पालन किए बिना विवेक का प्रयोग निर्णय को कमजोर बना देगा। हमारी राय में, कमांडिंग ऑफिसर ने नियमों के तहत उन पर लगाए गए प्रतिबंध से अनभिज्ञ होकर अपनी शक्ति का प्रयोग किया है। यह पाए जाने पर कि कमांडिंग ऑफिसर का निर्णय अवैध है, उसके आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश को टिकने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

23. अपीलकर्ता की ओर से यह भी बताया गया है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के बाद, बल ने स्वैच्छा से 10 फरवरी 2010 को आरोपी लखविंदर कुमार और 4 मार्च, 2010 को आरके बिर्दी को हिरासत में सौंप दिया और बिना किसी आपत्ति के पुलिस द्वारा जांच की अनुमति दी और

सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा विचारण के विकल्प का प्रयोग नही किया गया था। विद्वान वकील का कहना है कि बाद में, इस तरह के विकल्प का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, तर्कों के समर्थन में प्रस्तुत जोगिंदर सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (1971) 3 एससीसी 86 के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया गया है, और हमारा ध्यान फैसले के पैराग्राफ 29 की ओर आकर्षित किया गया है जिसमें लिखा है -

"29 नियम 4 नियम 3 के खंड (ए) से संबंधित है और यह केवल तभी लागू होगा जब मजिस्ट्रेट सक्षम सैन्य प्राधिकारी द्वारा पेश किए बिना मुकदमा चलाने के लिए आगे बढेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस मामले में सहायक सत्र न्यायाधीश ने कमांडिंग ऑफिसर को कोई लिखित नोटिस नही दिया है जैसा कि नियम 4 के तहत परिकल्पित है।

लेकिन, हमारे विचार में, यह अनावश्यक था। जब सक्षम सैन्य अधिकारियों ने, अपीलकर्ता के खिलाफ कथित अपराध की प्रकृति को अच्छी तरह से जानते हुए, उसे सैन्य हिरासत से रिहा कर दिया था और उसे सिविल अधिकारियों को सौंप दिया था, तो मजिस्ट्रेट का इस आधार पर आगे बढ़ना उचित था कि सैन्य अधिकारियों ने निर्णय लिया था कि अपीलकर्ता पर कोर्ट-मार्शल द्वारा मुकदमा चलाने की आवश्यकता नही है और उस पर सामान्य आपराधिक न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया जा सकता है।

24.यह तर्क हमारे लिए सराहनीय नही है। जैसा कि पहले देखा गया था, आरोप पत्र दाखिल करने की तारीख पर, बल की ओर से एक आवेदन दायर किया गया था जिसमें सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा अभियुक्तों के मुकदमें के विकल्प का प्रयोग करने के लिए समय मांगा गया था। निम्नलिखित तिथि को ऐसा एक आवेदन दायर किया गया था। उस विशेष समय तक आरोपी व्यक्तियों का विचारण शुरू नही हुआ था और शुरू होने से पहले, विकल्प का प्रयोग किया गया था। जहां तक जोगिंदर सिंह (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय के अधिकार का संबंध है, यह स्पष्ट रूप से भिन्न है। उक्त मामले में, आपराधिक न्यायालय ने आपराधिक न्यायालय और कोर्ट मार्शल (क्षेत्राधिकार का समायोजन) नियम, 1952 के नियम 4 का पालन किए बिना एक सैन्यकर्मी के मुकदमें को आगे बढ़ाया जो आपराधिक न्यायालय को कमांडिंग ऑफिसर को लिखित नोटिस देने के लिए बाध्य करता था। उक्त अभियुक्त पर मुकदमा चलाने से पहले अभियुक्त को आपराधिक न्यायालय ने कमांडिंग ऑफिसर को कोई नोटिस नही दिया और आरोपी पर मुकदमा चलाया और अंततः दोषसिद्धि दर्ज की गई। उक्त दोषसिद्धि को इस आधार पर चुनौती दी गई कि आपराधिक न्यायालय ने बिना कोई नोटिस दिए अभियुक्त का विचारण दूषित है। उक्त प्रश्न का उत्तर देते समय इस न्यायालय ने अभियुक्तों को सैन्य हिरासत से रिहा करने और अभियुक्तों को अधिकारियों को सौंपने के कमांडिंग ऑफिसर के आचरण पर विचार किया और उस पृष्ठभूमि में पाया कि अपाराधिक न्यायालय द्वारा

मुकदमें को आगे बढाने और आपराधिक न्यायालय द्वारा कमांडिंग ऑफिसर को नोटिस देने में विफलता से दोषसिद्धि समाप्त नहीं होगी। यहां, वर्तमान मामले में, बल ने आरोप-पत्र प्रस्तुत करने के तुरंत बाद और मुकदमा शुरू होने से पहले आरोपी के खिलाफ मुकदमा चलाने के अपने विकल्प का प्रयोग किया है। इसलिए किए गए निवेदन में कोई दम नही है और इसलिए इसे खारिज कर दिय गया है।

25. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में हम बल के महानिदेशक को स्वतंत्रता देते है यदि ऐसी सलाह दी जाती है, तो कानून के अनुसार उपरोक्त टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए आठ सप्ताह के भीतर पूरे मुद्दे पर फिर से विचार करें और यदि वह इस निष्कर्ष पर आते है कि मुकदमा सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा चलाया जाना चाहिए, कोई भी चीज उसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष नए सिरे से उचित आवेदन करने से नहीं रोकेगी। यह बताने की आवश्यता नहीं है कि यदि बल के महानिदेशक उपरोक्त स्वतंत्रता का सहारा लेते है

सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमें के लिए आवेदन दायर करते है, तो मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट कानून के अनुसार उस पर विचार करेगा। यह स्पष्ट किया जाता है कि इन अपीलों में की गई टिप्पणियां उनके निस्तारण के उद्देश्य से हैं और इनका विचारण पर कोई प्रभाव नही पडेगा।

26. परिणामस्वरूप दोनो अपीलें स्वीकार की जाती है, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के 25 नबम्बर 2010 के आक्षेपित निर्णय और आदेश और 21 अक्टूबर 2011 के उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त किया जाता है। सुरक्षा बल न्यायालय उसे भेज गए रिकॉर्ड को तुरंत मुख्य न्ययिक मजिस्ट्रेट, श्रीनगर को भेजेगा जो उपरोक्त टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए कानून के अनुसार मामले में आगे बढेगा।

अपील स्वीकृत

यह अनुवाद आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी लक्ष्मण राम बिशनोई आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उदेश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और अधिकारिक उदेश्यों के निस्तारित की गई।